स्कूली दुनिया में शिष्टाचार

आनंद द्विवेदी

भूमण्डलीकरण के इस दौर में दुनियाभर में लोकतांत्रिक मूल्यों को तरजीह दी जाने लगी है जिसमें व्यक्ति की आज़ादी और उसकी गरिमा को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। वर्तमान समय में जब हम एक लोकतांत्रिक समाज गढ़ने की बात करते हैं तो उसकी तैयारी स्कूल से शुरू हो जाती है। हमारे देश का संविधान लागू हुए करीब 72 साल हो गए हैं। जिस समय मैं इस लेख को लिख रहा था, उसके एक सप्ताह बाद ही 26 जनवरी मनाया जाना था। लेकिन मेरे मन में कई सवाल हैं। क्या वाकई हमारा देश संविधान के मुताबिक चलता है? क्या वाकई हमारे स्कूलों में लोकतांत्रिक नागरिकों को तैयार किया जा रहा है जहाँ सबको अपनी बात रखने की आज़ादी हो, व्यक्ति की गरिमा का सम्मान हो और दुनिया को जानने-समझने के लिए एक बेहतरीन स्थान और व्यक्ति का सानिध्य हो!

ए.एस. नील जो एक मनोवैज्ञानिक होने के साथ ही *समरहिल* जैसे लोकप्रिय स्कूल के संस्थापक थे, उनका कहना था कि हम दुनियाभर में स्कूली शिक्षा में हमेशा ही बच्चों के सम्मान और उनकी गरिमा को अनदेखा करते आए हैं। जिन बालकों की ऊर्जा का प्रयोग जीवन्त, न्यायसंगत और जागरूक समाज बनाने में किया जाना चाहिए, वे स्वयं न्याय से वंचित हैं। बहुत-से परिवारों में अभिभावकों द्वारा भी बच्चों के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार देखने को मिलता है जिसमें मार-पिटाई, धमकी, गाली-गलौज आम बात है। जिस बचपन को हम अनदेखा करते रहे हैं, वही हमारा भविष्य होगा। इसी सन्दर्भ में, मैं तीन स्कूलों का किस्सा आपको सुनाता हूँ जिसमें दो सरकारी प्राइमरी स्कूल हैं और एक प्राइवेट इंटर कॉलेज है।

जब मैं सहम गया

पहला किस्सा एक प्राइवेट स्कूल का है। एक समय पर मैं इस स्कूल का छात्र था। इक्कीसवीं शताब्दी को शुरू हुए अभी दो ही वर्ष हुए थे। इलाहाबाद के हिन्दी माध्यम के बेहतर माने जाने वाले स्कूलों में से एक में मेरा दाखिला हुआ था। मैं अपने स्कूल दाखिले के पहले दिन का ही उदाहरण आपसे साझा कर रहा हूँ। जानबूझकर स्कूल के नाम का उल्लेख नहीं कर रहा हूँ। लेकिन मैं एक अन्य प्राइवेट प्राइमरी स्कूल

से पढ़कर इस नए स्कूल में आया था। इस स्कूल के नियम पिछले स्कूल से काफी अलग थे। स्कूल पहुँचते ही जूते-मोजे उतारकर मैंने प्रार्थना की। मैं कक्षा छठवीं का छात्र था। स्कूल में मेरा पहला दिन था इसलिए मुझे यहाँ के नियम-कायदे मालूम नहीं थे। अचानक 'सावधान' शब्द क्लास में गूँज गया। हड़बड़ा के क्लास में बैठे 50 लड़के एक साथ सावधान की मुद्रा में खड़े हो गए थे। क्लास में प्रार्थना से लौटने के बाद जो शोर था, वो एकदम सन्नाटे में बदल गया। आते ही शिक्षक ने कहा, "बैठ जाइए।" सारे लड़के बैठ गए। सब कुछ जैसे यंत्र से संचालित हो। मैं बैठने के बाद थोड़ा सहज हुआ ही था कि तभी शिक्षक ने एक, दो, तीन... संख्या बोलना शुरू कर दिया। लड़के अपने रोल नम्बर पर 'उपस्थित' कहकर चिल्लाते और संख्या आगे बढ़ जाती। 50 तक की गिनती में 6 छात्र अपनी उपस्थिति रोल नम्बर आने पर नहीं बोल पाए थे और उन्हें शिक्षक ने खड़ा होने का निर्देश दे दिया। रजिस्टर रखने के बाद अध्यापक खड़े हुए और एक छात्र के पास गए जो मेरे सामने ही खड़ा था। अध्यापक ने गुस्से में पूछा, "जब मैं उपस्थिति ले रहा था तो तुम क्या कर रहे थे?" लड़का तुरन्त गिड़गिड़ाते हुए बोला, "सरजी, माफ कर दीजिए, मैं सुन नहीं पाया।" तब तक सरजी ने उसके बाल पकड़कर 2-3 ज़ोरदार थप्पड़ जड़ दिए। फिर बोले, "मैं सिर्फ एक बार नम्बर बोलूँगा। बदतमीज़, तेरे लिए मैं बार-बार नहीं बोलूँगा।" फिर उन्होंने उसे बैठा दिया। बैठे लड़के खड़े छात्रों को

एकटक देखते रहे। क्लास में शान्ति भयानक लगने लगी थी।

सभी लड़कों की औसत उम्र 10-12 साल थी। अगस्त का पहला दिन था। उमस की वजह से छात्र पसीने से भीगे थे। उपस्थिति न बोल पाने वाले बाकी बचे पाँच छात्र शान्ति से खड़े थे और उन्हें अपना आने वाला समय बहुत तकलीफदेह नज़र आने लगा था। अगले पाँच मिनट में वही क्रिया उन पाँचों छात्रों के साथ भी दोहराई गई और उन छात्रों ने प्रार्थना की ताल से एक अलग ताल में चीत्कार किया। मेरी रूह काँप गई। मैं यह कहाँ पहुँच गया? लेकिन इससे भी ज़्यादा मैं तब घबराया जब शिक्षक मेरी ओर देखकर बोले, "हे यू, खड़े हो जाओ। तुम्हारी ड्रेस कहाँ है?" मैंने अपने अगल-बगल देखा। फिर आवाज़ आई, "नालायक, तुझी से पूछ रहा हूँ। दाएँ-बाएँ क्या देख रहा है?" मैं खड़ा हो गया और कुछ डरते हुए बोला, "जी, आज मेरा पहला दिन है। अभी 2-3 दिन लगेंगे ड्रेस बनने में।" उन्होंने फिर कहा, "एक महीना हो गया स्कूल खुले, अभी तक कहाँ थे?" "सर, मेरा दाखिला कल ही विद्यालय में हुआ है। अब मैं जल्दी ही ड्रेस बनवा लूँगा।" उन्होंने मेरा नाम पूछा और बोले, "एक दिन बाद अपना रोल नम्बर पूछ लेना।"

इन दिनों मेरे स्कूली अनुभव

ये तो मेरे स्कूली जीवन की बात हुई। अपने स्कूली अनुभव से गुज़रे हुए मुझे लगभग 20 साल हो गए हैं। अब मैं भारत के मध्यभाग यानी मध्य प्रदेश के सागर ज़िले में नौकरी कर रहा हूँ। संयोग से मेरा कार्य भी शिक्षक शिक्षा से ही जुड़ा हुआ है। अब मैं उस दौर से गुज़र चुका हूँ जब शिक्षकों से मुझे डर लगता था। अपने कार्य के सिलसिले में विभिन्न सरकारी स्कूलों में मेरा जाना होता है। तो चलिए, अब मैं आपको दो अन्य सरकारी स्कूलों की ओर ले चलता हूँ।

पहले सरकारी स्कूल में करीब 300 बच्चे पढ़ते हैं। 15 शिक्षिकाओं का स्टाफ है। कई कक्षाओं के 2-2 सेक्शन हैं। वहाँ की हेड मास्टर बहुत खुशमिजाज़ महिला हैं। उनके स्कूल में मैं महीने में कम-से-कम 3-4 बार जाता रहा हूँ। यह अनुभव वर्ष 2019 का है जब कोरोना ने अपनी काली छाया पूरी दुनिया में नहीं फैलाई थी। एक दिन हम स्कूल में कुछ शैक्षिक चुनौतियों पर चर्चा कर रहे थे। तभी स्कूल की मॉनिटरिंग करने एक अधिकारी आए। उनके आते ही मैम ने उन्हें खड़े होकर नमस्ते किया। वे अधिकारी मैम की कुर्सी पर जाकर बैठ गए और जाँचने के लिए एक-दो रजिस्टर माँगे। उन्हें चेक किया। स्कूल में विद्यार्थियों की संख्या और उस दिन की उपस्थिति को मोबाइल ऐप में फीड किया। एक सूचना कम होने पर मैम को फटकार लगाई। मैम

खड़ी थीं और घबराई हुई थीं। मैंने उन्हें बैठने के लिए अपनी कुर्सी देनी चाही तो उन्हें दूसरी कुर्सी उठाकर बैठने का ध्यान आया। इसके बाद अधिकारी दूसरी कक्षा में चले गए। उस कक्षा में घुसने वाली सीढ़ी टूटी थी। उसे बनवा लेने और स्कूल पेंट करवा लेने का निर्देश देकर अधिकारी चले गए। यह देखकर बुरा लगा कि स्कूल की प्रधान अध्यापिका जिनकी उम्र करीबन 55 साल है और जो पिछले 25 सालों से शिक्षिका रही हैं, उनके साथ एक अधिकारी ऐसा व्यवहार करता है।

मैंने इस स्कूल में निरीक्षण के दौरान पाया है कि कुछ शिक्षिकाएँ और कई बार प्रधान अध्यापिका बच्चों को गुस्से में पीट देती हैं। इस पर उनका तर्क होता है कि थोड़ा-बहुत डर ज़रूरी है। स्कूलों में बच्चे खाली वक्त में लड़ते मिल जाएँगे। मैंने शुरुआती कक्षाओं के बच्चों की आपस में लड़ने की प्रवृत्तियों के बहुत ही आक्रामक रूपों को अनुभव किया है। इसके पीछे क्या कारण हो सकते हैं? शिक्षिका बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करती हैं? उस अधिकारी का अधिकारी उससे कैसा व्यवहार करता होगा? ये एक सरकारी स्कूल के प्रभारी के साथ होने वाले व्यवहार को दर्शाता है। प्रभारी शिक्षिका का व्यवहार भी अपनी अधीनस्थ शिक्षिकाओं के साथ अक्सर तानाशाहीपूर्ण ही रहता है।

प्रयास की यह कैसी बुनियाद?

एक अन्य स्कूल का किस्सा सुनाता हूँ। यह कोरोना काल के बाद

की दुनिया है। वर्तमान साल 2022. इसे घावों के भरने का वर्ष भी कहना चाहिए क्योंकि दुनिया मौत की भयावह तस्वीरों को इतने करीब से देखकर गुज़री है। यह एक ऐसा वक्त है जब दुनियाभर में लर्निंग लॉस और बच्चों के साथ-साथ वयस्कों के भी सामाजिक-भावनात्मक स्वास्थ्य पर बहुत ज़ोर दिया जा रहा है। शिक्षकों के प्रशिक्षणों में भी बच्चों के भावनात्मक और सामाजिक स्वास्थ्य को बेहतर करने के लिए प्रेममयी और मनोरंजक वातावरण बनाने को लेकर चर्चाएँ हो रही हैं। इस सबके बावजूद स्कूलों की कैसी स्थिति है, यह जानने के लिए अब महामारी के बाद के एक सरकारी स्कूल की ओर चलते हैं।

मैं करीब 12 बजे स्कूल पहुँचा था। 50 बच्चों के स्कूल में दो ही शिक्षक थे। सरकारी प्राइमरी स्कूल था। इन दोनों शिक्षकों को मैं पहला और दूसरा शिक्षक कहकर ही सम्बोधित करूँगा। पहले शिक्षक कक्षा 1, 2 और 3 के बच्चों को एक साथ पढ़ा रहे थे। दूसरे शिक्षक कक्षा चौथी और पाँचवीं के बच्चों को गणित पढ़ा रहे थे। इस स्कूल में मैं पहली बार गया था। उद्देश्य था, नए शिक्षक साथियों के साथ काम की शुरुआत करना। उनकी शिक्षण विधियों और उनकी कक्षा में बच्चों के सीखने के स्तर को समझना। चूँकि दोनों शिक्षकों से विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों में मेरा मिलना हुआ था इसलिए वे मेरे चेहरे से परिचित थे। मैं भी उन्हें पहचानता था। स्कूल विन्ध्य पहाड़ियों से सटा हुआ था और क्लास कमरे के अन्दर न चलकर, प्रांगण में ठण्ड की खिली मीठी धूप के बीच लगी थी। पहले शिक्षक ने मुझे बैठने को कुर्सी दी। चौथी और पाँचवीं की क्लास बेशक कमरे के अन्दर चल रही थी। बच्चे टाटपट्टी पर नीचे बैठे थे। कोरोना के डर से मैंने कुर्सी पर बैठना उचित समझा।

मल्टी ग्रेड कक्षा थी जिसमें कक्षा 1, 2 और 3 के लड़के-लड़कियाँ, दोनों बैठे थे। मैंने ध्यान दिया कि कुछ बच्चे किताब से देखकर कविता लिख रहे हैं – 'जिसने सूरज चाँद बनाया'। कुछ बच्चे वर्कबुक में गणित में घटाव के सवाल हल कर रहे थे। दूसरे शिक्षक की गुणा पढ़ाने की आवाज़ बाहर तक आ रही थी। जिसमें वे 0 (शून्य) में संख्याओं के गुणन को समझा रहे थे। मैंने फिर से गुनगुनी धूप को महसूस किया। अपने चारों तरफ की प्रकृति की ओर देखा। चारों तरफ हरियाली थी। और दाईं तरफ ऊँचा पहाड़ और शान्ति। पढ़ने में तल्लीन प्यारे बच्चे। बच्चों को पढ़ाते शिक्षक मुझे फरिश्ते समान लग रहे थे। तभी शिक्षक एक बालिका की पीठ पर धप-से मारकर बोले, "कॉपी में लिख, इधर-उधर क्या देख रही है?"

सारे बच्चे और तन्मयता से अपना

काम करने लगे। मैंने खामोशी को थोड़ा तोड़ते हुए सर से कहा कि काफी खूबसूरत जगह पर स्कूल है। गाँव के बारे में पूछने पर सर ने बताया कि यह जंगल का इलाका है। आधे आदिवासी और आधे पटेल रहते हैं। उसके बाद मैं शान्त ही रहा क्योंकि मैं पढ़ाने में डिस्टर्ब नहीं करना चाहता था। शिक्षक ने पहली के बच्चों को अपने पास बुला लिया। बोले, "जो कविता लिख रहे हो, चलो, अब उसे पढ़ते हैं।" उन्होंने किताब से एक-एक शब्द बोलकर बच्चों को कविता पढ़वाई। फिर बच्चों से कहा, "चलो, अब आप पढ़ो।" बच्चों को थोड़ी कविता याद थी तो वे शब्द पर उँगली रख गलत-सही पढ़ने लगे। इस दौरान सर ने एक बच्चे को फिर थप्पड़ जड़ दिया जो किताब से अलग, दूसरी ओर देखने लगा था। पहली के करीब 5 बच्चे थे। पाँचों से उन्होंने कविता पढ़वाई। जो बच्चे नहीं पढ़ पा रहे थे, सर उनकी मदद भी कर रहे थे। लेकिन इस सबके बीच सारे बच्चों से किताब में ध्यान लगाने का ऐसा आग्रह था कि कोई बच्चा इधर-से-उधर देखा नहीं कि झट मार पड़ी। 2-3 बच्चे इस गतिविधि में पिट चुके थे। मैं शान्त था।

थोड़ी देर बाद दूसरे शिक्षक की कक्षा खत्म हो गई तो वे बाहर आए। मैं उनसे भी मिला। मैंने कहा, "सर, 0 को आप अच्छा समझा रहे थे।" सर ने बताया, "बच्चों को कई तरीकों से गणित सिखाना पड़ता है।" मैंने सहमति जताई। मैंने सर से पूछा कि क्या वे कुछ लिखते-पढ़ते भी हैं। सर ने बताया, "पहले लिखता था, अब लिखना बन्द कर दिया है।" बोले, "मैं बीआरसी, बीएसी – सब रह चुका हूँ।" इसी बीच उनकी कक्षा की एक बच्ची पहाड़े की किताब लेकर जा रही थी। उन्होंने देख लिया। तुरन्त उस लड़की को पकड़कर मेरे सामने धड़ाधड़ पिटाई की। शिक्षकों के व्यवहार से मैं स्वयं थोड़ा घबराने लगा था। फिर उन्होंने मुझे समझाया, "कुछ सवाल हल करने को दिए हैं। पहाड़ा नकल करने जा रही थी।" बच्ची किताब रखकर दोबारा कमरे में चली गई। सर बताने लगे, "अगर गुणा नहीं बन रहा है तो उसे जोड़ लो। या 9 का गुणा नहीं बन रहा है तो 6 का पहाड़ा पढ़ लो 9 बार। कुछ सोचो, नकल करने की ज़रूरत नहीं है।" मैंने उनकी बातों से सहमति जताई। "अभी थोड़ी देर में कक्षा से आता हूँ।" ऐसा कहते हुए वे फिर अपनी कक्षा में पढ़ाने चले गए।

मैं पहले शिक्षक के पास पुनः बैठ गया। अब वे दूसरी के बच्चों को घटाना बता रहे थे। लाइन खींचकर कैसे घटाना कर सकते हैं, ये सिखा रहे थे। 2-3 मिनट ही गुज़रे होंगे कि दूसरे शिक्षक की कक्षा से बच्चों के पिटने की आवाज़ आने लगी। धड़-धड़, धड़-धड़ा-धड़। सर सवाल गलत करने पर बच्चों को बेदर्दी से पीट रहे

थे और बोल रहे थे, "तुम लोगों को एक साल से कह रहा हूँ कि 9 तक पहाड़े याद कर लो, तुम लोगों को याद नहीं हो रहा है।" अब खूबसूरत पहाड़ मुझे अखर रहे थे। दोपहर एक बजे तक मैं दोनों शिक्षकों के पढ़ाने के तरीकों को समझने की कोशिश कर रहा था। दोनों शिक्षक अच्छा प्रयास कर रहे थे लेकिन उनके प्रयास की सारी बुनियाद ही गलत प्रतीत हो रही थी। मुझे लगा, ऐसे शिक्षकों को तो जेल में होना चाहिए।

घुटी हुई शान्ति मुझे रास नहीं आ रही थी। मैंने पहले शिक्षक से कहा, "सर, मैं बच्चों से थोड़ी पेन्टिंग करवाना चाहता हूँ।" सर ने इजाज़त दे दी और बच्चों को निर्देश दिया, "ठीक है, अभी यह काम बन्द करके पेंटिग बना लो।" बच्चे अब थोड़ा तनाव मुक्त दिख रहे थे। मैंने उन्हें सफेद कागज़ बाँटे। वे अपनी पेन्सिलों को छीलने लगे और अपनी पसन्द के चित्र बनाने लगे। कुछ बच्चे रंग लेकर आए थे, सर भी रंग का डिब्बा उठा लाए थे। कुछ क्रेयॉन और वॉटर कलर मैं भी लेकर गया था। बच्चे चित्र बनाने में मशगूल हो गए थे। वे एक-दूसरे के चित्रों को देख भी रहे थे। मैंने कुछ बच्चों को ही कलर दिए थे। वे आपस में रंग बाँटकर चित्रों में रंग भर रहे थे। करीब 40 मिनट बाद वे ढेरों चित्रों के साथ मेरे सामने थे। बच्चों ने फूल, घर, चिड़िया, सूरज, मोर, पहाड़, बादल, बरसात, लड़की, घास, ट्रेन और जंगल तक को अपने चित्रों में उकेरा था। जो बच्चे दूसरे शिक्षक की कक्षा में मार खा रहे थे, उनकी कक्षा खत्म होने पर वे बच्चे भी थोड़ा उदास मन से मुस्कराते हुए अन्य बच्चों की देखा देखी चित्र बनाने लगे थे।

बच्चों पर भय का असर

मैं आपको बच्चों और शिक्षकों की उन चुनौतियों की ओर ले गया जिनके बारे में हम कई बार गम्भीरता से बात करने से बचते हैं। शायद शिक्षक अपने द्वारा किए गए अत्याचारों को ये जामा पहना सकते हैं कि वे बच्चों की भलाई के लिए उन्हें मार रहे थे। या बच्चों में अनुशासन स्थापित करने के लिए ऐसा करना ज़रूरी है। लेकिन शिक्षक आखिर बच्चों को मारते क्यों हैं? कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि 'हो सकता है, शिक्षकों की भी शिक्षा ऐसे ही हुई हो। उन्हें लगता हो कि उन्हें अधिकार है, वे बच्चों की भलाई के लिए ऐसा कर सकते हैं'। हम इस बात से सहमत हो सकते हैं कि दोनों शिक्षक बच्चों को पढ़ाने में मेहनत कर रहे थे। लेकिन हम इस बात से असहमत नहीं हो सकते कि बच्चों के साथ होने वाला यह दुर्व्यवहार, दुनिया के प्रति उनकी मानसिकता और प्रतिक्रिया को प्रभावित करता है। अक्सर बच्चे अपने छोटे भाई-बहनों द्वारा गलती होने पर, उनसे संवाद

करने की बजाय हिंसा करना ज़्यादा उचित समझते हैं। अपने से छोटे बच्चे को पीटना, आपस में मार-धाड़ करना जैसी हिंसा स्कूलों में आपको आम तौर पर देखने को मिल जाएगी। दूसरा, यदि बच्चों के मन में भय रहेगा तो वे कुछ नया सीखने की बजाय हमेशा बचाव की मुद्रा में रहेंगे। सवाल पूछना, तर्क करना, अपनी जिज्ञासा को दूर करने के लिए चर्चा करना आदि महत्वपूर्ण कौशल उनमें विकसित नहीं हो पाएँगे। इसके अलावा, लगातार तनावपूर्ण माहौल में सीख रहे बच्चों में कई बार कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याएँ भी विकसित हो जाती हैं।

मैं अपने स्कूल के अनुभव पर वापस चलता हूँ - शिक्षकों की मार के डर से गृहकार्य पूर्ण न होने पर कई बच्चे घर से स्कूल के लिए तो निकलते थे लेकिन वे स्कूल न जाकर, पार्कों में घूमने चले जाते थे। गाइड की मदद से गणित और विज्ञान का होमवर्क करते थे जिस वजह से उनमें विषय की अवधारणात्मक समझ विकसित नहीं हो पाती थी। कभी भी पिट जाने के भय से कई बच्चे कक्षाओं में शिक्षकों से सवाल नहीं करते थे जिसके कारण आत्मविश्वास की कमी और समूह में अपनी बात कहने में झिझक देखने को मिलती थी। कुछ बच्चों में नशा और अपराध के प्रति आकर्षण दिखाई देने लगा था। कुछ बच्चों में शिक्षकों के प्रति विद्रोह और बदले की भावना सिर उठाने लगी थी। इन सबमें सबसे विनाशकारी था, स्कूलों से ड्रॉप आउट। सिर्फ मार-पिटाई के डर की वजह से इंटर के बाद कई छात्रों ने विश्वविद्यालय की ओर रुख नहीं किया। इकतरफा शिक्षा से उनका मन भर चुका था।

बच्चों पर दोस्ती का असर

एक अन्य बच्ची की कहानी के साथ मैं इस आलेख को अन्त की ओर ले जाना चाहूँगा। लड़की का नाम हेमलता था। वह सरकारी प्राथमिक शाला की कक्षा चौथी की छात्रा थी। शरीर से देखने पर वह कुपोषित लगती थी। मैं अपनी संस्था की तरफ से एक सरकारी स्कूल में शिक्षण कार्य के लिए नियमित रूप से जाता था। यह वर्ष 2018 की बात है। मैं कक्षा-1 के विद्यार्थियों के साथ हिन्दी भाषा पर कार्य करता था। स्कूल में चार शिक्षक पहले से कार्यरत थे। वे बच्चों के प्रति बहुत कठोर थे। मेरी कक्षा हमेशा शोरगुल से भरी रहती थी। मैंने बच्चों को यहाँ तक छूट दे रखी थी कि यदि उनका पढ़ने का मन न हो तो वे अन्य बच्चों को डिस्टर्ब किए बिना कक्षा के बाहर खेल सकते हैं। कई बार मेरी आधी कक्षा बाहर खेल रही होती थी और मैं बाकियों को पढ़ा रहा होता था। इस पर वहाँ के शिक्षक मुझ पर नाराज़ होते थे। इसलिए बच्चों को

कक्षा में रोकने के लिए मैं रोज़ नई कहानियाँ और कविताएँ लेकर जाया करता था। लेकिन बच्चे तो शरारती होते हैं, उन्हें रोका या बाँधा नहीं जा सकता।

साल के आखिर में मुझे बच्चों को आज़ादी देने का बहुत सुखद परिणाम देखने को मिला। एक तो कक्षा की उपस्थिति वर्ष भर अच्छी रहती थी। अक्सर गाँव के अन्य छोटे बच्चे जिनका स्कूल में नाम नहीं लिखा था, वे भी स्कूल आने लगे थे। दूसरा बदलाव जो मुझे दिखा, वह था बच्चों के आत्मविश्वास में। बच्चे सांस्कृतिक कार्यक्रमों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेने लगे थे। साथ ही, वे काफी मुखर भी हो गए थे।

एक दिन हेमलता की कक्षा में पढ़ाने वाले अध्यापक हेमलता को मारते हुए मेरी कक्षा में ले आए। उन्होंने कहा, "इसे अभी अक्षर लिखना भी नहीं आता है। आज 6 महीने बाद स्कूल आई है। कुछ पूछो तो बोलती नहीं है। इसे आप सम्भालो।" पहले तो हेमलता आधे घण्टे तक रोती रही। मेरे कुछ भी पूछने पर उसने कोई जवाब नहीं दिया। बच्चों को मैंने जो काम दिया था, वह भी उसने करने से मना कर दिया। यह सब देखते हुए ए.एस. नील की एक पंक्ति मुझे याद आ गई। ऐसे बच्चों के लिए प्रेम ही दवा का काम कर जाता है। उस दिन तो हेमलता ने कुछ नहीं किया। बस, वह चुपचाप बैठी रही। मैंने भी एक-दो दिन उससे कोई बात नहीं की। लेकिन धीरे-धीरे वह कक्षाई गतिविधियों से जुड़ने लगी जैसे कक्षा में कहानी सुनाना, गीत गाना, दिन की मुख्य बात बताना या कविता सुनाना। धीरे-धीरे हेमलता सबमें

शामिल होने लगी। जैसे-जैसे उसे यह एहसास होने लगा कि इस कक्षा में वह बेधड़क रह सकती है, उसने शब्दों को लिखना भी शुरू कर दिया। साथ ही, वह अन्य बच्चों के साथ उनकी शरारतों में भी शरीक होने लगी।

कक्षा में बराबरी का संवाद

इस प्रक्रिया में एक चीज़ जो महत्वपूर्ण थी वो यह कि मैं कक्षा में बच्चों के साथ टाटपट्टी पर बैठता था। मार-पिटाई, डाँट-डपट का नामो-निशान मेरी कक्षा में नहीं था। कक्षा शोर-शराबे से भरी रहती थी। मैं बच्चों के साथ बराबरी का संवाद करता था। बच्चे मुझसे और मैं बच्चों से हँसी-मज़ाक करते थे। मेरी कक्षा में बड़ों की तरह बच्चों को अपनी बात रखने की पूरी आज़ादी थी। वे बिना मेरी इजाज़त के कक्षा से बाहर जा सकते थे। बेशक, मैं इस बात का ध्यान रखता था कि जब बच्चे कक्षा के बाहर जाएँ तो वे सड़क पर न चले जाएँ।

लोकतांत्रिक समाज में संवाद और आपसी विचार विमर्श की प्रक्रिया महत्वपूर्ण होती है। लेकिन ज़्यादातर स्कूली संस्थाओं में बराबरी से संवाद का सम्पूर्ण अभाव दिखता है। सामाजिक और आर्थिक असमानता के इस दौर में हम स्कूलों में तो बराबरी का कुछ अनुभव दे ही सकते हैं। बच्चे सब कुछ सीखते हैं। अगर बड़ा छोटे को मारता है तो यह बात उनके लिए सामान्य-सी हो जाएगी। अगर स्कूल में शिक्षक तानाशाही रवैया रखते हैं तो बच्चा भी शिक्षक बनने पर तानाशाह बन सकता है। यदि शक्तिशाली ओहदे पर बैठा व्यक्ति अपने कर्मचारियों से बदतमीज़ी से बात करता है तो कहीं यह मानसिकता स्कूली शिक्षा की ही देन तो नहीं है? हम मार और भय से लोकतांत्रिक समाज और लोकतांत्रिक नागरिक नहीं बना सकते हैं। हम खुद संविधान तोड़कर दूसरों को संविधान नहीं पढ़ा सकते। स्कूलों को हम एक अच्छे समाज का निर्माण करने और बच्चों में लोकतांत्रिक मूल्यों की समझ विकसित करने के लिए ज़िम्मेदार संस्था के तौर पर देखते हैं। इस ओर बढ़ने के लिए हमें बच्चों को भी बराबर का सम्मान देना पड़ेगा।

आनंद द्विवेदी: सामाजिक कार्यकर्ता हैं। सरकारी शिक्षकों के सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण से करीब 4 वर्षों से जुड़े हुए हैं। वर्तमान में सागर, मध्य प्रदेश में कार्यरत हैं।

सभी चित्र: रुतुजा सिद्दाम: पुणे में विज़ुअल आर्ट पर काम करती हैं। बच्चों के लिए पुस्तक चित्रण और ग्राफिक डिज़ाइन में खास रुचि। इसके अलावा पेंटिंग, इंस्टॉलेशन, फोटोग्राफी आदि में भी रुचि। इनका काम मुख्य रूप से समकालीन घटनाओं और सामाजिक मुद्दों के प्रभाव का प्रतिनिधित्व करता है। भविष्य में एक विज़ुअल आर्टिस्ट के रूप में शैक्षिक विकास के लिए काम करना चाहती हैं।